विशिष्ट न्यायालय, अनु.जाति/जनजाति (अ.नि.) प्रकरण, जयपुर महानगर–प्रथम

पीठासीन अधिकारीः **मोहन लाल जाट**, आर.जे.एस. (जिला न्यायाधीश संवर्ग)

(1) दाण्डिक अपील प्रकरण संख्याः 26/2025 (सी.आई.एस. नंबर 350/2025)

01. राजेश कुमार पुत्र कैलाश, आयु 40 वर्ष, निवासी पुराना पताः– प्लॉट नंबर 15, गली नंबर 2, अशोकपुरा, सोडाला, न्यू सांगानेर, जयपुर एवं वर्तमान पताः– मांगीलाल वर्मा का प्लॉट, गली नंबर 1, अशोकपुरा, सोडाला, न्यू सांगानेर रोड, जयपुर एवं अन्य पता प्लॉट नम्बर 110, इन्द्रपुरी कॉलोनी, रिद्धि सिद्धि कॉलोनी के पीछे, कालवाड रोड, जयपुर **–अपीलार्थी/अभियुक्त**

बनाम

01. राजस्थान राज्य **–प्रत्यर्थी कम 01**

02. संतोष पत्नी घनश्याम निवासी प्लॉट नं.–5, गली नंबर 1, अशोकपुरा न्यू सांगानेर रोड, सोडाला, जयपुर, राज0 **–प्रत्यर्थी कम 02/परिवादिया**

(2) दाण्डिक अपील प्रकरण संख्याः 27/2025 (सी.आई.एस. नंबर 358/2025)

01. संतोष पत्नी घनश्याम निवासी प्लॉट नं.–5, गली नंबर 1, अशोकपुरा न्यू सांगानेर रोड, सोडाला, जयपुर, राज0 **–अपीलार्थी/परिवादिया**

बनाम

01. राजेश कुमार पुत्र कैलाश, आयु 40 वर्ष, निवासी पुराना पताः– प्लॉट नंबर 15, गली नंबर 2, अशोकपुरा, सोडाला, न्यू सांगानेर, जयपुर एवं वर्तमान पताः– मांगीलाल वर्मा का प्लॉट, गली नंबर 1, अशोकपुरा, सोडाला, न्यू सांगानेर रोड, जयपुर एवं अन्य पता प्लॉट नम्बर 110, इन्द्रपुरी कॉलोनी, रिद्धि सिद्धि कॉलोनी के पीछे, कालवाड रोड, जयपुर **–प्रत्यर्थी/अभियुक्त**

उपस्थितः–

1. शबाना भाटिया, विद्वान चीफ एलएडीसी जयपुर महानगर प्रथम अभियुक्त की ओर से।
2. श्री सुभाषचंद खण्डेलवाल, विद्वान अधिवक्ता परिवादिया की ओर से।
3. विद्वान विशिष्ट लोक अभियोजक राज्य की ओर से।

निर्णय

दिनांकः 15.04.2026

1. प्रकरण में अभियुक्त राजेश कुमार की ओर से अपील पेश करने के पश्चात विगत कुछ पेशियों से उसकी ओर से किसी के भी उपस्थित नहीं आने पर उसकी उपस्थिति सुनिश्चित करने हेतु आवश्यक प्रयास किये गये लेकिन इसके बावजूद भी उसकी उपस्थिति सुनिश्चित नहीं हो पायी। ऐसे में इस संबंध में सुस्थापित विधिक स्थिति को देखते हुए हस्तगत दोनों ही अपील प्रकरणों का गुणावगुण पर निस्तारण किया जाना है। अतः इस संबंध में अभियुक्त राजेश कुमार का पक्ष रखने हेतु विधिक सहायता के रूप में अधिवक्ता की सेवाये जिला विधिक सेवा प्राधिकरण की ओर से उपलब्ध करवायी गयी है।

2. प्रकरण में वक्त निर्णय मुलजिम व्यक्तिशः उपस्थित नहीं है। इस संबंध में विद्वान अधिवक्ता परिवादी ने इस न्यायालय का ध्यान माननीय उच्चतम न्यायालय के सम्मानीय न्यायिक दृष्टांत ***MEENAKSHI VERSUS STATE OF***

HARYANA & ANOTHER 2026 SCC OnLine SC 94 की ओर आकर्षित किया है जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा इस संबंध में यह उल्लेखित किया गया है कि:—

6. The Appellate Court or Revisional Court after being satisfied of the necessity to suspend the sentence would have exercised its power and granted the prayer for suspension of sentence and ordered for release of such appellant — accused on bail. The appeal before the Appellate Court many a times would be pending for months or years together and many a times after being posted before the Court for hearing it would be adjourned for myriad reasons namely either at the instance of the appellant – accused or the State or the complainant etc. However, in such circumstances, to call upon the accused to be present on every date of hearing before the Revisional Court or the Appellate Court would be burdensome to such accused and same is not warranted at all and it would serve no purpose. In the event of appeal or revision being dismissed the consequences would automatically follow and the jurisdictional magistrate would be fully empowered to secure the presence of such accused in accordance with the provisions of the Act.

ऐसे में पूर्वोक्त विधिक स्थिति को देखते हुए संबंधित अपील प्रकरणों को अभियुक्त की अनुपस्थिति में ही निर्णित किया जा रहा है।

3. हस्तगत दोनों अपीलें न्यायालय विशिष्ट न्यायिक मजिस्ट्रेट (एन. आई. एक्ट प्रकरण) क्रम संख्या 04, जयपुर महानगर प्रथम (जिसे आगे विचारण न्यायालय के नाम से भी उल्लेखित किया जा रहा है) द्वारा नियमित आपराधिक प्रकरण संख्या 163/2021 उनवान संतोष बनाम राजेश कुमार (जिसे आगे मूल प्रकरण के नाम से भी उल्लेखित किया जा रहा है) में दिनांक 07.05.2025 को पारित निर्णय एवं दंडादेश (जिसे आगे आक्षेपित निर्णय/आदेश के नाम से भी उल्लेखित किया जा रहा है) के विरुद्ध माननीय सेशन न्यायालय जयपुर महानगर प्रथम के समक्ष प्रस्तुत की गई थी जो तत्पश्चात् अन्तरित होकर इस न्यायालय को प्राप्त हुई है।

4. उक्त दोनों ही अपील प्रकरण एक ही निर्णय/आदेश के विरुद्ध प्रस्तुत होने और दोनों का आपस में एक—दूसरे से अंतःसंबंधित होने से इनका गुणावगुण पर एक ही निर्णय/आदेश द्वारा निस्तारण किया जा रहा है।

5. निर्णय में पक्षकारान को सुविधा की दृष्टि से उनके अपील में स्टेटस (यथा अपीलार्थी एवं प्रत्यर्थी) के बजाय मूल प्रकरण में स्टेटस (यथा परिवादी एवं मुलजिम) के रूप में ही उल्लेखित करने का प्रयास किया जा रहा है।

6. मूल प्रकरण के सुसंगत तथ्य संक्षेप में इस प्रकार है कि परिवादी ने दिनांक 08.01.2021 को संबंधित न्यायालय के समक्ष एक परिवाद इस आशय का पेश किया था कि परिवादी व अभियुक्त के परिवार के मध्य वर्षो से जान पहचान एवं घनिष्ठता रही है। अभियुक्त ने अपनी माताजी के साथ आकर प्लॉट क्रय करने के लिए कुछ रूपयों की आवश्यकता बताई जिस पर परिवादी ने मदद स्वरूप अभियुक्त को दिनांक 20.02.2020 को 06 माह के लिए 5,50,000/— रूपये नकद उधार दिये। ततपश्चात कोरोना का प्रकोप आ जाने के कारण समय गुजरता गया और माह अक्टूबर 2020 में अभियुक्त से रकम का

तकाजा करने पर अभियुक्त ने साउथ इंडियन बैंक लि0 के अपने खाते के दो चेक क्रमशः चेक संख्या–019267 राशि 2,50,000/– रूपये दिनांकित 10.11.2020 एवं चेक संख्या–019268 राशि 3,00,000/–रूपये दिनांकित 18.11.2020 इस आश्वासन के साथ जारी किये कि उक्त दोनों चेक्स को बैंक में प्रस्तुत करने पर भुगतान प्राप्त हो जायेगा। उक्त दोनों चेकों को परिवादी ने दिनांक 23.11.2020 को स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, शाखा सोडाला, अजमेर रोड, जयपुर में अपने खाते में जमा करवाया जो दिनांक 24.11.2020 को फण्ड इनसफिशियेन्ट के रिमार्क के साथ अनादरित हो गये। इस पर परिवादी ने अभियुक्त से सम्पर्क किया और चेक की राशि का भुगतान करने को कहा तो भी अभियुक्त ने भुगतान नहीं किया। इसके बाद परिवादी ने अपने अधिवक्ता के मार्फत लीगल नोटिस जरिये रजिस्टर्ड ए.डी. दिनांक 02.12.2020 को भिजवाया। अभियुक्त के क्रम संख्या 1 व 2 पर अंकित पते पर भेजे गये नोटिस परिवादी के अधिवक्ता को वापस प्राप्त हो गये जबकि अभियुक्त के क्रम संख्या 3 पर अंकित पते पर भिजवाया गया नोटिस ट्रेक रिपोर्ट के मुताबिक दिनांक 03.12.2020 को प्राप्त हो गया। इस प्रकार अभियुक्त को सूचना प्राप्त हो जाने के बावजूद भी उसने चेकों में वर्णित धनराशि का भुगतान नहीं किया। इस प्रकार अभियुक्त का कृत्य धारा 138 परक्राम्य लिखत अधिनियम के तहत अपराध है।

7. उक्त परिवाद पर संबंधित न्यायालय द्वारा धारा 138 परक्राम्य लिखत अधिनियम के अपराध का प्रसंज्ञान लिया जाकर प्रकरण दर्ज रजिस्टर किया गया, मुलजिम को तलब किया गया और उसे उक्त अपराध का आरोप सारांश सुना कर विचारण प्रारम्भ किया। दौराने विचारण परिवादी की ओर से पी.ड.1 संतोष स्वयं परिवादिया को परीक्षित करवाया गया तथा असल चेक प्रदर्श पी.1 व प्रदर्श पी.2, चेक जमा कराने की स्लिप प्रदर्श पी.3 व प्रदर्श पी.4, रिटर्न मीमो प्रदर्श पी.5 व प्रदर्श पी.6, विधिक नोटिस की प्रति प्रदर्श पी.7, डाक रसीद क्रमशः प्रदर्श पी.8 लगायत प्रदर्श पी.10, लौटकर आया मूल लिफाफा मय ए.डी. प्रदर्श पी. 11 व प्रदर्श पी.12, बैंक अकाउण्ट स्टेटमेंट प्रदर्श पी.13 एवं एसबीआई बैंक कामा हाउस, अजमेर रोड शाखा में प्रस्तुत आवेदन पत्र प्रदर्श पी.14 के रूप में प्रदर्शित करवाया गया है।

8. तत्पश्चात अभियुक्त को धारा 313 दं.प्र.सं. के तहत परीक्षित किया गया तो अपने विरूद्ध आई साक्ष्य को गलत होना बताया और स्वयं को निर्दोष होना तथा झूंठा फंसाना बताया। अभियुक्त द्वारा बावजूद अवसर दिये जाने साक्ष्य सफाई पेश नहीं की गयी है।

9. तत्पश्चात बहस अंतिम सुनी जाकर विचारण न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय/आदेश पारित किया गया है जिसमें अभियुक्त राजेश कुमार को धारा 138 परक्राम्य लिखत अधिनियम के अपराध के आरोप में दोषसिद्ध घोषित किया जाकर उसे 01 वर्ष 04 माह के साधारण कारावास से दण्डित किया गया है तथा धारा 357 दण्ड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के तहत अभियुक्त को आदेशित किया है कि वह परिवादिया को 7,00,000/–रूपयें अक्षरे सात लाख रूपये मात्र बतौर प्रतिकर अदा करे और अदम अदायगी प्रतिकर अभियुक्त को 02 माह का अतिरिक्त साधारण कारावास भुगताने का आदेश दिया है।

10. उक्त दोषसिद्धि एवं दण्डादेश के निर्णय से व्यथित होकर अभियुक्त की ओर से उक्त फौजदारी अपील संख्या–26/2025 (सी.आई.एस.नंबर 350/2025)

उनवान राजेश कुमार बनाम राजस्थान राज्य व अन्य तथा उक्त दण्डादेश व प्रतिकर की राशि को अपर्याप्त होना मानते हुए उससे व्यथित होकर परिवादी की ओर से हस्तगत अपील प्रकरण संख्या–27/2025,(सी.आई.एस.नंबर 358/2025) उनवान संतोष बनाम राजेश कुमार पेश की गयी है।

11. अभियुक्त राजेश कुमार की ओर से अपने अपील मीमो में यह अंकित किया गया है कि विचारण न्यायालय ने पत्रावली पर आई साक्ष्य का गहनता से अनुशीलन नहीं कर सरसरी तौर पर आलौच्य आदेश पारित किया है। संव्यवहार के समर्थन में परिवादी ने कोई भी दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं की है तथा इस बाबत भी कोई स्पष्ट कथन नहीं किया है कि उक्त धनराशि परिवादी द्वारा अपने घर से निकालकर रखी हुई थी या बैंक से निकालकर दिये थे और इस बाबत अपनी आयकर विवरणिका, बैंक स्टेटमेंट या अन्य कोई दस्तावेजी साक्ष्य पेश नहीं की है। परिवादिया अपनी आर्थिक स्थिति को बता पाने में असमर्थ रही है। लेकिन इन तथ्यों पर विचारण न्यायालय ने कोई गौर नहीं किया है। परिवादिया द्वारा उक्त वर्णित चेक्स का दुरूपयोग किया गया है और इस बात की पुष्टि पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य सामग्री से होती है। विचारण न्यायालय ने केवल इस आधार पर कि उक्त वर्णित चेक्स अभियुक्त के खाते के ही है, आक्षेपित निर्णय पारित कर गंभीर कानूनी भूल की है। अभियुक्त ने अपने धारा 313 दण्ड प्रक्रिया संहिता के तहत परीक्षण में स्पष्ट रूप से बताया है कि वह निर्दोष है और उसे झूंठा फंसाया गया है। लेकिन इस वास्तविक वस्तुस्थिति पर भी विचारण न्यायालय ने कोई गौर नहीं किया है। दोनों पक्षों के मध्य आपसी लेन देन के चलते अभियुक्त ने उक्त चेक्स परिवादिया को दिये थे जिनका परिवादिया ने दुरूपयोग किया है और यह तथ्य पत्रावली पर उपलब्ध रिकोर्ड से साबित है जिसके विपरीत जाकर विचारण न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय पारित किया है। अन्त में अपील को स्वीकार कर विचारण न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय को अपास्त कर अभियुक्त को दोषमुक्त घोषित करने का निवेदन किया है।

12. परिवादिया संतोष ने अपने अपील मीमो में यह उल्लेखित किया है कि विचारण न्यायालय का आक्षेपित निर्णय अभियुक्त राजेश कुमार की धारा 138 परक्राम्य लिखत अधिनियम के अपराध के आरोप में दोषसिद्धि की हद तक तो उचित है लेकिन विचारण न्यायालय ने अभियुक्त को विहित अधिकतम सजा से दण्डित नहीं कर नरमी का रूख अपनाया है, जो उचित नहीं है। पत्रावली पर उपलब्ध रिकोर्ड के मुताबिक अभियुक्त ने विचारण में सहयोग नहीं किया है और विचारण के दौरान अभियुक्त का आचरण भी समुचित नहीं रहा है लेकिन इन तथ्यों को भी विचारण न्यायालय ने नजर अंदाज कर दिया है। प्रकरण सम्मन प्रकृति के मामले से संबंधित है जिसका विचारण साढे तीन साल से भी अधिक समय तक चला है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि अभियुक्त ने विचारण में कोई सहयोग नहीं किया है। अतः विचारण न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय में अधिरोपित सजा एवं अर्थदण्ड की राशि को बढाया जाकर अभियुक्त को दो वर्ष के कारावास एवं चेक की धनराशि से दुगुनी धनराशि के जुर्माने से दण्डित किया जाना न्यायोचित है। अतः विचारण न्यायालय के आक्षेपित निर्णय में उक्तानुसार संशोधन किया जावे।

13. इस संबंध में दौराने बहस विद्वान अधिवक्ता अभियुक्त का अपने अपील मीमों में उल्लेखित तथ्यों को ही दोहराते हुए मुख्य रूप से यह तर्क रहा है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने पत्रावली पर आई मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्य का सही रूप से विवेचन नहीं कर मुलजिम को गलत रूप से दोषसिद्ध किया है और उसे गलत रूप से अत्यधिक दंड से दण्डित किया है। अतः विचारण न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय एवं दण्डोदश को अपास्त किया जावे तथा यह न्यायालय यदि विचारण न्यायालय द्वारा पारित की गयी अभियुक्त की दोषसिद्धि के निष्कर्ष को समुचित पाता है तो उसके प्रति नरम रूख अपनाया जावे।

14. इस संबंध में दौराने बहस विद्वान अधिवक्ता परिवादिया का अपने अपील मीमों में उल्लेखित तथ्यों को ही दोहराते हुए मुख्य रूप से यह तर्क रहा है कि विचारण न्यायालय ने मुलजिम को दोषसिद्ध करने में पत्रावली पर आयी साक्ष्य को बिल्कुल सही विवेचन किया है जो विचारण न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय में किये गये उल्लेख से बहुत स्पष्ट रूप से परिलक्षित है। ऐसे में मुलजिम की दोषसिद्धि के निर्णय में कोई विधिक एवं तथ्यात्मक त्रुटि नहीं रही है। जहां तक दण्डादेश के प्रश्न का संबंध है, मुलजिम द्वारा वर्ष 2020 में धनराशि उधार ली गयी थी और उसकी पुनः अदायगी पेटे परिवादी को चेक दिया गया था तथा विचारण न्यायालय ने लगभग साढे चार वर्ष पश्चात प्रकरण का निर्णय किया है लेकिन उक्त अवधि के ब्याज एवं अन्य खर्चो के पेटे समुचित धनराशि नहीं दिलवायी है जबकि इस संबंध में माननीय उच्चतम न्यायालय एवं विभिन्न सम्मानीय उच्च न्यायालयों द्वारा समय समय पर यह मत व्यक्त किया गया है कि इस प्रकार के मामलों में कम से कम 9 प्रतिशत वार्षिक की दर से चेक में वर्णित धनराशि पर ब्याज दिलाया जाना चाहिए। ऐसी स्थिति में प्रकरण में विचारण न्यायालय ने प्रतिकर के रूप में अभियुक्त को जो सात लाख रूपये मात्र अदा करने का निर्देश दिया है वह भी चेक में वर्णित धनराशि एवं विचारण की अवधि को देखते हुए पर्याप्त नहीं है तथा विचारण न्यायालय ने नरम रूख अपनाते हुए अभियुक्त को सजा भी अपर्याप्त दी है। इस न्यायालय द्वारा सजा स्थगन आदेश के क्रम में अभियुक्त को जो 20 प्रतिशत धनराशि जमा करवाने हेतु निर्देश दिया गया था उसकी भी अभियुक्त ने पालना नहीं की है। ऐसी स्थिति में विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त पर अधिरोपित सजा एवं प्रतिकर की राशि को भी समुचित रूप से बढाया जावे। अपने तर्को के समर्थन में विद्वान अधिवक्ता परिवादी ने निम्न सम्मानीय न्यायिक दृष्टांत पेश किया हैः—

R. Vijayan Vs Baby & Anr. AIR 2012 SC 528

15. इस संबंध में उभय पक्ष की ओर से रखे गये तर्कों पर विचार किया गया, तथा उनकी रोशनी में पत्रावली पर उपलब्ध मैटेरियल एवं विधिक स्थिति का भी ध्यानपूर्वक अवलोकन किया गया जिससे यह प्रकट है कि हस्तगत प्रकरण के निर्णय हेतु न्यायालय को इस बाबत विचार करना है कि क्याः—

उभय पक्ष की ओर से प्रस्तुत अपीलों की रोशनी में विचारण न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय एवं दण्डादेश में हस्तक्षेप की कोई न्यायोचित गुंजाईश है या नहीं ?

16. इस संबंध में उभय पक्ष की ओर से रखे गये तर्को एवं सुसंगत विधिक स्थिति की रोशनी में पत्रावली पर उपलब्ध मैटेरियल के अवलोकन से यह प्रकट है कि परिवादिया पी.ड.1 संतोष ने अपने परिवाद के अनुरूप ही अपनी मुख्य परीक्षा में सारतः यह बताया है कि अभियुक्त ने परिवादिया से जान पहचान होने से अपनी विधिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु परिवादिया से दिनांक 20.02.2020 को छह माह के लिए 5,50,000/–रूपयें उधार लिये थे और तकाजा करने पर माह अक्टूबर, 2020 में उनकी पुनः अदायगी के पेटे परिवादिया को अपने बैंक साउथ इंडियन बैंक लिमिटेड के अपने बैंक खाते के दो प्रश्नगत चैक क्रमशः चैक संख्या 019267 राशि 2,50,000/–रूपयें दिनांकित 10.11.2020 एवं 019268 राशि 3,00,000/–रूपयें दिनांकित 18.11.2020 दिये थे। उक्त दोनों चैक्स को क्रमशः प्रदर्श पी–1 व पी–2 के रूप में प्रदर्शित करवाया है। इस संबंध में इस गवाह से मुलजिम पक्ष की जिरह को देखे तो उनका भी ऐसा कोई सुझाव नहीं रहा है कि उक्त दोनों चैक्स मुलजिम के बैंक खाते के नहीं हो या उन पर जारीकर्त्ता के रूप में मुलजिम के हस्ताक्षर नहीं हो या उनको मुलजिम ने परिवादिया को नहीं दिया हो बल्कि दौराने जिरह विचारण न्यायालय के समक्ष एवं अपील मीमों में इस न्यायालय के समक्ष यह सुझाव/अभिवचन किये है कि परिवादिया ने मुलजिम के हस्ताक्षरशुदा उक्त दोनों ब्लैंक चैक्स का दुरूपयोग किया है। इस प्रकार मुलजिम भी अप्रत्यक्ष रूप से उक्त दोनों चैक्स का अपने बैंक खाते से संबंधित होना और उन पर अपने हस्ताक्षर होना ही स्वीकार करता है। ऐसी स्थिति में हस्तगत मामले की प्रकृति को देखते हुए प्रकरण में परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 118 एवं धारा 139 की उपधारणाओं के आकर्षित होने के बिन्दु पर विचार बाबत विधिक स्थिति का अवलोकन करे तो यह प्रकट है कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अपने सम्मानीय न्यायिक दृष्टांत **JAIN P. JOSE Vs SANTOSH & ANR. 2022 Supreme (SC) 1276** में इस संबंध में यह मत व्यक्त किया गया है किः–

7. A recent decision of a three Judges Bench of this Court in "Kalamani Tex and Another vs. P. Balasubramanian" (2021) 5 SCC 283, examines the scope and ambit of the presumption under Sections 118 and 139 of the N.I. Act, to hold:

"14. Once the 2nd appellant had admitted his signatures on the cheque and the deed, *the trial Court ought to have presumed that the cheque was issued as consideration for a legally enforceable debt.* The trial Court fell in error when it called upon the respondent complainant to explain the circumstances under which the appellants were liable to pay. Such approach of the trial Court was directly in the teeth of the established legal position as discussed above, and amounts to a patent error of law.

17. Even if we take the arguments raised by the appellants at face value *that only a blank cheque and signed blank stamp papers were given to the*

<u>*respondent, yet the statutory presumption cannot be obliterated.*</u> It is useful to cite "Bir Singh v. Mukesh Kumar", where this court held that:

"Even a blank cheque leaf, voluntarily signed and handed over by the accused, which is towards some payment, would attract presumption under Section 139 of the Negotiable Instruments Act, in the absence of any cogent evidence to show that the cheque was not issued in discharge of a debt."

18. Considering the fact that there has been an admitted business relationship between the parties, we are of the opinion that the defence raised by the appellants does not inspire confidence or meet the standard of 'preponderance of probability'. In the absence of any other relevant material, it appears to us that the High Court did not err in discarding the appellants' defence and upholding the onus imposed upon them in terms of Section 118 and Section 139 of the NIA."

17. इस प्रकार पूर्वोक्त विधिक स्थिति की रोशनी में हस्तगत मामले में परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 118 एवं धारा 139 की विधिक उपधारणाएं आकर्षित होती है जो इस रूप में है कि परिवादी ने उक्त चैक्स धारा 138 परक्राम्य लिखत अधिनियम में उल्लेखित किसी ऋण या अन्य दायित्व के पूर्णतः या भागतः उन्मोचन के पेटे ही प्राप्त किये थे और इन तथ्यों के खंडन का भार अभियुक्त पर है।

18. इस संबंध में अभियुक्त की ओर से यह तर्क रखे गये है कि परिवादी ने ऐसा कोई भी दस्तावेज पेश नहीं किया है जिससे यह दर्शित होता हो कि उसने अभियुक्त को 5,50,000/– रूपयें उधार दिये थे, उसके खाली चैक्स का दुरूपयोग कर उनमें अधिक राशि भरी है, एक चैक में आल्टरेशन कर "1" को "2" बनाया हुआ है, रूपये उधार देने की कोई तारीख नहीं बतायी है, साक्ष्य में गंभीर विरोधाभास है, परिवादी ने अपनी वित्तिय सक्षमता को साबित नहीं किया है। इस संबंध में यह उल्लेखनीय है कि अभियुक्त ने परिवादिया से रूपयें उधार लेने और उसी के बदले चैक दिये जाने के तथ्य को युक्तियुक्त रूप से विवादित नहीं किया है, हालांकि अभियुक्त ने चैक्स में वर्णित धनराशि से कम रूपयें उधार लेना बताया है जिसके संबंध में उल्लेख आगे किया जा रहा है। जहां तक चैक प्रदर्श पी–1 में आल्टरेशन के तथ्य का संबंध है, उक्त चैक उक्त आधार पर अनादरित नहीं हुआ है तथा अभियुक्त ने अपने द्वारा हस्ताक्षरशुदा ब्लेन्क चैक देना बताया है, ऐसे में यदि अभियुक्त ने प्रदर्श पी–1 चैक ही ब्लेन्क दिया था और उसमें राशि बाबत कोई भी अंकन नहीं किया था तो उसमें आल्टरेशन का कोई प्रश्न ही नहीं रह जाता है, इसके अलावा चेक प्रदर्श पी.1 के अवलोकन से उसमें शब्दो में अंकित रूपयों में ऐसी कोई ऑवर रायटिंग या आल्टरेशन किया हुआ दर्शित नहीं होता है जिससे इस संबंध में रखे गये तर्क में समुचित बल होना नहीं पाया जाता है। रूपयें उधार देने की तारीख परिवादिया ने परिवाद में लिखवायी हुई है तथा इसे दौराने साक्ष्य नहीं बता पाना प्रकरण में कोई तात्विक नहीं है क्योंकि रूपयें उधार लेने के तथ्य को अभियुक्त ने विवादित नहीं किया है। रूपयें कम उधार लिये हो इस बाबत भी अभियुक्त ने परिवादिया से जिरह में तो 1,25,000/– रूपयें का सुझाव दिया है और अपनी

ओर से देना बताकर विचारण न्यायालय की पत्रावली में प्रस्तुत किये गये जवाब नोटिस में 2,00,000/– रूपयें का उल्लेख किया है तथा इस संबंध में अपने धारा 313 दंड प्रक्रिया संहिता के परीक्षण में कोई भी विशिष्ट कथन नहीं किया है और इस बाबत कोई बचाव साक्ष्य भी पेश नहीं की है। ऐसे में इस संबंध में अभियुक्त के स्वयं के कथन ही अंतःविरोधी है। इस संबंध में साक्ष्य में अन्य भी कोई तात्विक विरोधाभास सामने नहीं आये है। परिवादिया की वित्तिय सक्षमता के संबंध में अभियुक्त ने न तो जवाब नोटिस में कोई उल्लेख किया है और न ही दौराने जिरह उससे कोई प्रश्न पूछे है और न ही इस संबंध में पृथक से कोई साक्ष्य पेश की है। इस संबंध में विधिक स्थिति पर विचार करे तो यह प्रकट है कि माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस बाबत अपने सम्मानीय न्यायिक दृष्टांत ***ASHOK SINGH Vs STATE OF UTTAR PRADESH & ANR. 2025 INSC 427*** में यह उल्लेखित किया है कि:–

22. The High Court while allowing the criminal revision has primarily proceeded on the presumption that it was obligatory on the part of the complainant to establish his case on the basis of evidence by giving the details of the bank account as well as the date and time of the withdrawal of the said amount which was given to the accused and also the date and time of the payment made to the accused, including the date and time of receiving of the cheque, which has not been done in the present case. Pausing here, such presumption on the complainant, by the High Court, appears to be erroneous. ***The onus is not on the complainant at the threshold to prove his capacity/ financial wherewithal to make the payment in discharge of which the cheque is alleged to have been issued in his favour. Only if an objection is raised that the complainant was not in a financial position to pay the amount so claimed by him to have been given as a loan to the accused, only then the complainant would have to bring before the Court cogent material to indicate that he had the financial capacity and had actually advanced the amount in question by way of loan.*** In the case at hand, the appellant had categorically stated in his deposition and reiterated in the cross–examination that he had withdrawn the amount from the bank in Faizabad (Typed Copy of his deposition in the paperbook wrongly mentions this as 'Firozabad'). The Court ought not to have summarily rejected such stand, more so when respondent no.2 did not make any serious attempt to dispel/negate such stand/statement of the appellant. Thus, on the one hand, the statement made before the Court, both in examination–in–chief and cross–examination, by the appellant with regard to withdrawing the money from the bank for giving it to the accused has been disbelieved whereas the argument on behalf of the accused that he had not received any payment of any loan amount has been accepted. In our decision in M/s S. S. Production v. Tr. Pavithran Prasanth, 2024 INSC 1059, we opined:

'8. From the order impugned, it is clear that though the contention of the petitioners was that the said amounts were given for producing a film and were not by way of return of any loan taken, which may have been a probable

defence for the petitioners in the case, but rightly, the High Court has taken the view that evidence had to be adduced on this point which has not been done by the petitioners. Pausing here, the Court would only comment that the reasoning of the High Court as well as the First Appellate Court and Trial Court on this issue is sound. Just by taking a counter-stand to raise a probable defence would not shift the onus on the complainant in such a case for the plea of defence has to be buttressed by evidence, either oral or documentary, which in the present cases, has not been done. *Moreover, even if it is presumed that the complainant had not proved the source of the money given to the petitioners by way of loan by producing statement of accounts and/or Income Tax Returns, the same ipso facto, would not negate such claim for the reason that the cheques having being issued and signed by the petitioners has not been denied, and no evidence has been led to show that the respondent lacked capacity to provide the amount(s) in question.* In this regard, we may make profitable reference to the decision in Tedhi Singh v Narayan Dass Mahant, (2022) 6 SCC 735: '10. The trial court and the first appellate court have noted that in the case under Section 138 of the NI Act the complainant need not show in the first instance that he had the capacity. The proceedings under Section 138 of the NI Act is not a civil suit. *At the time, when the complainant gives his evidence, unless a case is set up in the reply notice to the statutory notice sent, that the complainant did not have the wherewithal, it cannot be expected of the complainant to initially lead evidence to show that he had the financial capacity.* To that extent, the courts in our view were right in holding on those lines. *However, the accused has the right to demonstrate that the complainant in a particular case did not have the capacity and therefore, the case of the accused is acceptable which he can do by producing independent materials, namely, by examining his witnesses and producing documents. It is also open to him to establish the very same aspect by pointing to the materials produced by the complainant himself. He can further, more importantly, achieve this result through the cross examination of the witnesses of the complainant.* Ultimately, it becomes the duty of the courts to consider carefully and appreciate the totality of the evidence and then come to a conclusion whether in the given case, the accused has shown that the case of the complainant is in peril for the reason that the accused has established a probable defence.'

23. In the present case, on an overall circumspection of the entire facts and circumstances of the case, we find that the appellant succeeded in establishing his case and the Orders passed by the Trial Court and the Appellate Court did not warrant any interference. The High Court erred in overturning the concurrent findings of guilt and consequential conviction by the Trial Court and the Appellate Court.

ऐसे में पूर्वोक्त विधिक स्थिति की रोशनी में इस बाबत हस्तगत मामले की पूर्वोक्त तथ्यात्मक स्थिति को देखते हुए परिवादिया की वित्तिय सक्षमता बाबत भी बचाव पक्ष का तर्क तात्विक नहीं रह जाता है।

19. ऐसे में प्रकरण में मुलजिम परिवादी के पक्ष में सृजित उक्त विधिक उपधारणाओं को संभावनाओं की प्रबलता की हद तक भी खंडित कर पाने के अपने दायित्व में पूर्ण रूप से असफल रहा है। ऐसी स्थिति में पत्रावली पर आई साक्ष्य से मुलजिम द्वारा अपने विधितः प्रवर्तनीय ऋण या अन्य दायित्व के उन्मोचन के पेटे ही परिवादी को हस्तगत प्रकरण के प्रश्नगत चेक्स जारी किया जाना युक्तियुक्त रूप से प्रमाणित है।

20. परिवादिया ने परिवाद के अनुरूप ही आगे अपनी मुख्य परीक्षा में यह भी कथन किया है कि अभियुक्त ने परिवादिया को उक्त चेक्स से संबंधित धनराशि का भुगतान नहीं किया जिस पर परिवादिया ने उक्त चेक्स को समाशोधन हेतु अपने बैंक में प्रस्तुत किया जो फण्डस इन्सफिसियेन्ट के रिमार्क के साथ दिनांक 24.11.2020 को अनादरित हो गये। उक्त चैक्स के पेटे अभियुक्त ने परिवादिया को कोई राशि अदा की हो, इस बाबत भी कोई समुचित तथ्य साक्ष्य से सामने नहीं आये है। इस संबंध में शेष तथ्यों की ताईद चेक जमा कराने की पर्ची प्रदर्श पी.3 व पी.4, चेक रिटर्न मीमो प्रदर्श पी.5 व पी.6 तथा परिवादिया के बैंक स्टेटमेन्ट प्रदर्श पी.13 से भी होती है, जिनमें से बैंक स्टेटमेंट प्रदर्श पी.13 पर बैंककर्मी के हस्ताक्षर भी है और बैंक की मोहर भी लगी हुई है जिसमें उक्त चेक्स के रिटर्न होने का कारण भी स्पष्ट रूप से अंकित है। पूर्वोक्त तथ्य इस गवाह से बचाव पक्ष द्वारा जिरह में भी अखण्डित रहे है। इस संबंध में मुलजिम पक्ष की ओर से रखे गये इस तर्क पर भी विचार किया गया कि प्रकरण में प्रस्तुत चैक रिटर्न मीमों पर संबंधित बैंक के किसी कर्मचारी के हस्ताक्षर व बैंक की सील मोहर लगी हुई नहीं है। ऐसे में उनके आधार पर परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 146 की उपधारणा आकर्षित नहीं होने से चैक्स के अनादरण का तथ्य साबित नहीं है। इस प्रकार के मामले में माननीय कलकत्ता उच्च न्यायालय ने अपने सम्मानीय न्यायिक दृष्टांत **Pravin Kumar Tiwari Vs. Ajit Chandra Mandal 2025 Supreme (Cal) 995** में यह मत व्यक्त किया है कि:—

7. In the present context the bank return memo allegedly issued by Central Bank of India is marked as exhibit –2 with objection. It is true that the said system generated slip though mentioned the print date, print time, return date and serial number along with bank code, user ID, Branch along with the details of the impugned cheque and reason for dishonour but it does not bear any seal or signature of Bank concerned. Usually the system generated copies do not require any signature but ld. Counsel appearing on behalf of the accused/opposite party herein strenuously argued that section 146 specifically states that the banks slip or memo should have official mark denoting that the cheque has been dishonored.

8. Needless to say that such bank slip is required to be marked to draw only for the presumption that the cheque has been dishonored. In the present context it is nobody's case that the impugned cheque has not been dishonored. The accused/opposite party also did not give reply to the demand notice denying the fact that the cheque was dishonoured. Even when the accused was examined under section 313 Cr.P.C., in answer to question no. 5 relating to "bank return memo" his answer was simply 'No'. The accused

opposite party herein has also deposed as DW–1 and in his entire evidence, nowhere he has stated that the cheque in question was never dishonored. Ld. Trial court made a narrow interpretation of the words 'having thereon the official mark denoting that the cheque has been dishonored' by saying that the exhibit–2 does not bear any official mark of such bank and thereby court below has confused "official mark" with "official seal and signature". As I have stated above that the cheque return memo clearly indicates the Bank Code, Branch name, branch code, the user ID, and also about details of dishonoured cheque along with reason for dishonor with print out date and time and as such there is hardly any scope to say that the cheque return memo marked as exhibit 2, does not bear official mark denoting that the cheque has been dishonored on the ground of "exceeds arrangement". No evidence is also forthcoming before the court that the said official mark of the bank on exhibit–2 are false or fabricated.

9. On perusal of section 146 of the N.I. Act it is very much clear that the said provision has been incorporated in the statute to verify the fact as to whether the cheque was produced before the bank and was dishonoured on that particular ground or not. In the present case as I have already stated that exhibit–2 clearly states that the cheque got dishonored on the ground of "exceeding arrangements". Since the aforesaid cheque return memo was electronically generated and since it was issued by the bank, it is beyond the control of the complainant, if the bank authority does not put signature or seal on the said cheque return memo. Section 146 of the N.I. Act does not prescribe any particular form of cheque return memo and the cheque return memo is not a document which is required to be covered under section 4 of the Bankers Book (Evidence) Act, 1891 and as such even the cheque return which is merely an intimation, does not bear seal of the bank, it does not render the cheque return memo as invalid or illegal.

10. A co–ordinate bench of Delhi High Court in Guneet Bhasin Vs. State of NCT of Delhi and others, reported in 2022 SCC Online Del 3967 held on a similar context as follows:–

"9. The cheque return memo is a memo informing the payee's banker and the payee about the dishonour of a cheque. When the cheque is dishonoured, the drawee bank immediately issues a cheque return memo to the payee's banker mentioning the reason for non–payment. The purpose of the cheque return memo is to give the information of the holder of the cheque that his cheque on presentation could not be encashed due to the variety of reasons as mentioned in the cheque return memo. As per the section 146 of the NI act, the cheque return memo on presentation presumed the fact of dishonour of the cheque unless and until such fact is disapproved. Neither section 138 nor the section 146 of the NI act has prescribed any particular form of cheque return memo. The section 138 of the NI Act does not mandate any particular form of cheque return memo which is nothing but a mere information given by the Banker of the due holder of a cheque that the cheque has been returned

as unpaid. If the cheque return memo is not bearing any official stamp of the bank, it does not render the cheque return memo as invalid or illegal. The cheque return memo is not a document which is not required to be covered under section 4 of the Bankers Book (Evidence) Act, 1891. If there is any infirmity in the cheque return memo, it does not render entire trial under section 138 of the NI Act as nullity."

11. On perusal of the impugned cheque return memo marked exhibit-2 it reflects that the cheque bearing no. 747476 amounting to Rs. 6 lakhs could not be encashed on the ground of 'exceeds arrangements'. The petitioner during the entire course of trial never disputed his signature in the cheque nor about the dishonour of cheque by the concerned banker. Infact the impugned judgment by which Trial judge acquitted the accused on the said sole ground bereft of any factual or legal basis. Accordingly the system generated cheque return memo, having specific identifying mark of the bank, denoting that the cheque has been dishonoured on that particular ground, though does not bear seal or signature of the bank but I find that it is validly issued by the bank and merely because complainant did not bring any witness to prove the said document during trial, the proceeding of section 138 cannot be said to be invalid or illegal. Since the accused has not challenged trial courts observation that point no. 1,2,3 and 5-8 are in favour of the complainant and as I also do not find any illegality or infirmity in the judgment impugned for deciding point no. 1,2,3 and 5-8 in favour of the complainants, those issues are not required to be dealt with again in the present context.

12. In view of aforesaid discussion CRA (SB) 30 of 2023 is allowed. Accused namely Ajit Chandra Mondal is found guilty for committing offence punishable under section 138 of the N.I. Act and as such he is convicted.

ऐसे में पूर्वोक्त विधिक स्थिति की रोशनी में इस बाबत हस्तगत मामले की पूर्वोक्त तथ्यात्मक स्थिति को देखे तो इस संबंध में भी बचाव पक्ष का तर्क तात्विक व स्वीकार किये जाने योग्य नहीं पाया जाता है।

21. परिवादिया ने परिवाद के अनुरूप ही आगे अपनी मुख्य परीक्षा में यह भी बताया है कि इस पर उसने उक्त चेक्स में वर्णित धनराशि की मांग हेतु अपने अधिवक्ता के मार्फत अभियुक्त को एक नोटिस दिनांक 02.12.2020 को अभियुक्त के तीन अलग-अलग पतो पर भिजवाया जिनमें से दो पतों पर भेजे गये लिफाफे लौटकर वापस आ गये तथा तीसरे पते पर भेजा हुआ लिफाफा ट्रेक रिपोर्ट के मुताबिक अभियुक्त को दिनांक 03.12.2020 को प्राप्त हो गया। इन तथ्यों की भी ताईद विधिक नोटिस की प्रति प्रदर्श पी.7, पोस्टल रसीद प्रदर्श पी.8 से पी.10 एवं लौटे हुए मूल नोटिस मय लिफाफा प्रदर्श पी.11 व पी.12 एवं उन पर हो रहे पृष्ठांकन से भी होती है। मुलजिम द्वारा भी जवाब नोटिस विचारण न्यायालय की पत्रावली में पेश किया गया है जिससे भी नोटिस प्राप्त हो जाने के तथ्य पर कोई युक्तियुक्त विवाद रह जाना प्रकट नहीं होता है और इस संबंध में अन्य तथ्यों का भी कोई खंडन जिरह आदि में सामने नहीं आया है।

22. ऐसे में पत्रावली पर आयी साक्ष्य से यह तथ्य भी युक्तियुक्त रूप से प्रमाणित है कि अभियुक्त द्वारा प्रकरण के प्रश्नगत चैक्स के पेटे परिवादिया को कोई भुगतान नहीं करने पर परिवादिया द्वारा उक्त चैक्स को विहित समयावधि में भुगतान हेतु बैंक में पेश किया गया है जिनके धारा 138 परक्राम्य लिखत अधिनियम में वर्णित कारण से अनादरण के पश्चात परिवादिया द्वारा अभियुक्त को विहित समयावधि में उक्त चैक्स की धनराशि की मांग हेतु नोटिस भिजवाया गया है, जिसके मुलजिम की जानकारी में आ जाने के बावजूद भी मुलजिम द्वारा विहित समयावधि में परिवादिया को उक्त चेक्स में वर्णित धनराशि का भुगतान नहीं किया गया है, जिस पर परिवादिया द्वारा विहित समयावधि में दिनांक 08.01.2021 को हस्तगत प्रकरण का परिवाद संबंधित न्यायालय के समक्ष पेश कर दिया गया है। ऐसे में अभियुक्त को धारा 138 परक्राम्य लिखत अधिनियम के अपराध के आरोप में दोषसिद्ध किये जाने के संबंध में तो विचारण न्यायालय के निष्कर्ष में किसी प्रकार की विधिक एवं तथ्यात्मक त्रुटि रही होना नहीं पायी जाती है और इस हद तक विचारण न्यायालय का निष्कर्ष पुष्ट किये जाने योग्य पाया जाता है तथा इस हद तक अभियुक्त की ओर से प्रस्तुत अपील अस्वीकार कर खारिज किये जाने योग्य पायी जाती है।

23. जहां तक आक्षेपित निर्णय/दण्डादेश द्वारा अभियुक्त पर अधिरोपित मूल कारावास की सजा, प्रतिकर की राशि एवं अदम अदायगी प्रतिकर अतिरिक्त कारावास की सजा के प्रश्न का संबंध है, इस बाबत यह उल्लेखनीय है कि ऊपर विवेचन के मुताबिक यह साबित पाया गया है कि अभियुक्त ने अपने 5,50,000/—रूपये के विधिक दायित्व के उन्मोचन के पेटे परिवादी को दिनांक 10.11.2020 एवं दिनांक 18.11.2020 के प्रकरण के प्रश्नगत चेक जारी किये थे जो अनादरित हो गये और उनके संबंध में दर्ज हस्तगत प्रकरण का विचारण न्यायालय द्वारा करीब साढे चार वर्ष पश्चात दिनांक 07.05.2025 को निर्णय किया गया है। इस प्रकार परिवादिया को अपनी उक्त धनराशि को वसूलने के लिए लगभग साढे चार वर्ष की समयावधि तक अभियुक्त को अभियोजित करना पडा है। ऐसी स्थिति में परिवादिया को इस दौरान हुए ब्याज एवं अन्य खर्चो के नुकसान की भरपाई के पेटे विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त को अतिरिक्त धनराशि बतौर प्रतिकर अदा किए जाने का आदेश देने में किसी प्रकार की विधिक एवं तथ्यात्मक त्रुटि रही होना नहीं पाई जाती है लेकिन इस संबंध में जहां तक विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित मूल सजा, प्रतिकर की धनराशि की मात्रा एवं अदम अदायगी प्रतिकर अतिरिक्त कारावास की अवधि की युक्तियुक्तता एवं पर्याप्तता के तथ्य का संबंध है विचारण न्यायालय ने अभियुक्त को 01 वर्ष 04 माह के मूल साधारण कारावास से भी दण्डित किया है और 7,00,000/—रूपये मात्र बतौर प्रतिकर अदा करने का निर्देश भी दिया है और मुलजिम पर अदम अदायगी प्रतिकर की सूरत में 02 माह का अतिरिक्त साधारण कारावास भी अधिरोपित किया है।

24. इस संबंध में उक्त सजा एवं प्रतिकर की राशि को बढाये जाने के संबंध में परिवादिया का मुख्य आधार यह रहा है कि माननीय उच्चतम न्यायालय ने अपने सम्मानीय न्यायिक दृष्टान्त R. Vijayan Vs Baby & Anr. AIR 2012 SC 528 में यह मत व्यक्त किया है कि इस प्रकार के मामलों में 09 प्रतिशत वार्षिक की दर से ब्याज दिलाया जाना चाहिए और हस्तगत मामले में विचारण न्यायालय द्वारा

09 प्रतिशत से थोडी कम दर से ब्याज दिलाया गया है इसलिए उक्त प्रतिकर की राशि को बढाया जावे। इस संबंध में यह उल्लेखनीय है कि माननीय उच्चतम न्यायालय के ही उक्त सम्मानीय न्यायिक दृष्टान्त को विचार में लेते हुए माननीय केरला उच्च न्यायालय ने अपने सम्मानीय न्यायिक दृष्टान्त MATHEW.P.PAUL v. STATE OF KERALA 2019 Supreme(Online) (KER) 69860 में जो मत व्यक्त किया है वह निम्न प्रकार से है–

2. The contention of Sri.Julian Xavier J, the learned counsel for the revision petitioner was that the appellate court was not justified in modifying the sentence and reducing the fine amount to Rs.2,47,000/-, excluding the interest awarded for the sum at the rate of 9% per annum for the period referred to therein. According to the learned counsel, the Apex Court has directed in ***Vijayan v. Baby [011 (4) KLT 355 (SC)]*** to award interest at the rate of 9% per annum for the cheque amount, in order to maintain uniformity and in view of that, the Appellate Court has erred in modifying the sentence by setting aside the award of interest at the rate of 9% per annum for the fine amount which is the amount covered by the cheque.

3. *This Court is declined to accept the argument advanced by the learned counsel for the reason that,* in the decision in ***Vijayan's case*** cited supra, *the Apex court has only made a proposal for amending the provisions of the N.I Act,* so as to maintain uniformity in the matter of imposition of sentence. The proposal of the Honourable Apex Court was that, if interest at the rate of 9% per annum was awarded for the fine amount (the amount covered by the cheque), in all cases uniformity could be maintained. *Moreover, the modification was made by the appellate court in exercise of jurisdiction conferred on it under Section 386 (b) (iii) Cr.P.C and therefore, it does not call for interference.*

25. इस प्रकार चेक अनादरण के मामलों में दिलाये जाने वाले ब्याज की दर के संबंध में माननीय उच्चतम न्यायालय के पूर्वोक्त सम्मानीय न्यायिक दृष्टान्त को विचार में लेते हुए माननीय केरला उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त पूर्वोक्त विधिक स्थिति की रोशनी में विचारण न्यायालय इस संबंध में अपने विवेकाधिकार का भी समुचित रूप से उपयोग कर सकता है और इस न्यायालय के विनम्र मत में अपीलीय न्यायालय को विचारण न्यायालय के इस संबंध में विवेकाधिकार में तब तक हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए जब तक कि अधिरोपित दण्ड एवं प्रतिकर की राशि विहित मानकों से बहुत अधिक न्यून या बहुत अधिक उच्च नहीं रही हो। पूर्वोक्त की रोशनी में हस्तगत मामले को देखें तो विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित कारावास एवं अदा किये जाने हेतु निर्देशित प्रतिकर की राशि की मात्रा बहुत अधिक न्यून या उच्च रही होना नहीं पायी जाती है। ऐसी स्थिति में विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित मूल दण्डादेश, प्रतिकर की राशि की मात्रा एवं अदम अदायगी प्रतिकर अतिरिक्त कारावास की मात्रा के संबंध में भी विचारण न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित दण्डादेश में हस्तक्षेप किये जाने की कोई न्यायोचित गुंजाईश नहीं पायी जाती है। फलस्वरूप इस संबंध में अभियुक्त एवं परिवादिया दोनों ही की ओर से प्रस्तुत हस्तगत अपीलें अस्वीकार कर

खारिज किये जाने योग्य पायी जाती है तथा विचारण न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय एवं दण्डादेश पुष्ट किये जाने योग्य पाया जाता है।

आदेश

26. अतः अभियुक्त राजेश कुमार की ओर से प्रस्तुत हस्तगत दाण्डिक अपील प्रकरण संख्याः 26 / 2025 (सी.आई.एस. नंबर 350 / 2025) उनवान राजेश कुमार बनाम राजस्थान राज्य व अन्य एवं परिवादिया संतोष की ओर से प्रस्तुत हस्तगत दाण्डिक अपील प्रकरण संख्याः 27 / 2025 (सी.आई.एस. नंबर 358 / 2025) उनवान संतोष बनाम राजेश कुमार दोनों ही अस्वीकार कर खारिज की जाती है तथा विचारण न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय एवं दण्डादेश को पुष्ट किया जाता है।

27. अभियुक्त ने विचारण न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय एवं दण्डादेश पारित किये जाने के पश्चात यदि कोई अवधि अभिरक्षा में इस प्रकरण के पेटे गुजारी हो तो उसको नियमानुसार मूल सजा में समायोजित किया जावे।

28. विचारण न्यायालय द्वारा आक्षेपित निर्णय एवं दण्डादेश पारित किये जाने के पश्चात यदि अभियुक्त ने इस प्रकरण के पेटे कोई राशि विचारण न्यायालय या इस न्यायालय के संज्ञान में लाकर परिवादी को अदा की हो या अदा करने हेतु न्यायालय में जमा करवायी हो तो उसे भी नियमानुसार अधिरोपित प्रतिकर की राशि में से मुजरा किया जावे।

29. अभियुक्त का पुष्टि सजा वारण्ट बनाया जावे। अभियुक्त / उसके अधिवक्ता को निर्णय की निःशुल्क प्रति नियमानुसार अविलम्ब उपलब्ध करवायी जावे। मुलजिम वक्त निर्णय इस न्यायालय के समक्ष उपस्थित नहीं है। अतः अभियुक्त को नियमानुसार सजा भुगताने हेतु पुष्टि सजा वारण्ट एवं निर्णय की प्रतिलिपि सहित विद्वान विचारण न्यायालय का रिकोर्ड अविलम्ब वापिस भिजवाया जावे।

30. हस्तगत निर्णय दो मूल प्रतियों में तैयार किया जाकर इसकी एक–एक मूल प्रति निर्णय से संबंधित दोनों अपील प्रकरणों की पत्रावलियों में पृथक–पृथक लगायी जावे।

(मोहन लाल जाट)
न्यायाधीश
विशिष्ट न्यायालय अनुसूचित जाति / जनजाति,
(अ.नि.) प्रकरण, जयपुर महानगर–प्रथम

31. निर्णय लिखाया जाकर आज दिनांक 15.04.2026 को खुले न्यायालय में हस्ताक्षरित कर सुनाया गया।

(मोहन लाल जाट)
न्यायाधीश
विशिष्ट न्यायालय अनुसूचित जाति / जनजाति,
(अ.नि.) प्रकरण, जयपुर महानगर–प्रथम